INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL

वंचित वर्ग एवं दलित वर्ग : विश्व समाज दृष्टि का विकास

श्री सिद्धेश्वर भिमाशंकर कोणदे

प्रस्तावना :

पूँजीवादी व्यवस्था ने दलितों को वह परिवेश मुहैया नहीं कराया जिसकी अंबेडकर ने कल्पना की थी। विज्ञान प्रौद्योगिकी की व्याप्ति के साथ जातीयता संकीर्णता के नए समीकरण बने। औद्योगीकरण, शहरीकरण और उदारीकृत खुली अर्थव्यवस्था को समता, स्वतंत्रता का वह दरवाजा माना गया था जिसे बंधुता, बराबरी की ठंडी बयार के साथ आर्थिक विकास की बौछार की आशा की गई थी। 90 के दशक से जो पूँजीकामी व्यवस्था पल्लवित हुई उससे उन लोगों का विकास और जीवन स्तर तो ऊँचा नहीं उठा जिनके जीवन को खुशहाल और उन्नत बनाने की बातें की गई थी, हाँ राजनेता, मंत्री, पूँजीवादी पूँजीपति ठेकेदार और मुनाफाखोरी जरूरत मालामाल हुए हैं। शोषित, शोषित ही बना रहा तथा उसका दलन दूसरे रूप में ऊर्ध्व होता गया। आर्थिक, राजनीतिक, परिवर्तनों और उदारतावादी मूल्यों के प्रसार का एक लाभ वंचित-दलित वर्ग को जरूर मिला कि वे कुछ हद तक कर्म सिद्धांत की जकड़ से ढीले हुए और दलित तबका ऊँची जातियों के प्राधिकार सवाल करने की हिम्मत जुटा सका। हाशिएकृत लोग यह समझने लगे कि मेहनत प्रतिभा के बूते वे हाशिए से निकलकर केंद्र में आ सकते हैं। अतः समाज की मुख्यधारा एवं वैश्विक समाज में जगह बनाने के लिए उसने कठिन श्रम का वरण किया॥ कविता में स्मृति के अनुसृजन और आकांक्षित भविष्य की अभिव्यक्ति पर जोर रहता हैं। दलित काव्य आक्रोश की अभिव्यक्ति नहीं कहा जा सकता है। वास्तव में यह उन प्रस्थापना की व्याख्या करती है जो मानव विरोधी है। अंधश्रद्धा, आस्था की जगह गहन विश्लेषण और उसके विकास की सही दिशा और ऐतिहासिक और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में साहित्यक नियमों का अन्वेषण करने की दिशा में दलित कविता सन्नद्ध है। कविता पाठक से सीधे संवाद स्थापित करती है। वंचित तबके को नायकत्व देना तथा उसकी बातों को उठाना दलित कविता की प्रतिबद्धता है। यहाँ आवश्यक जान पड़ता है कि दलित वर्ग के राष्ट्रीय परिक्ष्यों के साथ वैश्विक संदर्भ पर भी गौर की जाए। शोषित दलित साहित्य विश्व मानव की बात करता है।

विख्यात राजनीतिक समाजशास्त्री धीरुभाई सेठ वैश्विक स्तर पर इस भेदभाव की पड़ताल करते हैं। उनके अनुसार "दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद की जड़ में जाति को और चित्र प्रदान करने वाली ब्राह्मणवादी विचारधारा की तरह श्वेतांगों की श्रेष्ठता वाली एक विचारधारा है। जो कानूनी रूप से उन्मूहित होने के बाद भी छुआछूत की तरह व्यवहार में जारी रहती है और जनता के बहू लाश को उपर मानव की हैसियत के कमतर कर देती है। इसी के साथ-साथ यूरोप में जिप्सी ओ के निरंतर उत्पीड़न पर भी ध्यान देना जरूरी है। वह छुआ-छूत से तो पीड़ित नहीं है परंतु उनके पास किसी तरह का अधिकार नहीं है वह संपूर्ण रूप से बहिष्कृत और निष्कासित है।" लगभग ऐसी ही दशा अमेरिका में अश्वेत और जापानी में बुरा कम समुदाय की है जिन्हें नागरिक अधिकार तक प्राप्त नहीं है। वैश्विक स्तर पर तमाम मंचों में दलितों

के उत्थान और विकास की मंत्रणा ए जरूर की जाती है परंतु दलित वंचितों को इनके इनमें शामिल करने के बावजूद इनके पीछे साजिश साजिशें रची जाती है।

दलित समाज अभिजात्य वर्ग द्वारा अनुस्यूत्त शोषणपरक साजिशों पर अपनी सहमति की मुहर लगाने से कतराता है क्योंकि दलित की मान्यताएँ नैतिक और मानवीय दृष्टिकोण पर आधारित है। दलित साहित्य शोषणकारी नायकत्त्व का धुर विरोधी है। दलित कविताओं में मनुष्यता की पक्षधरता, समानता की वकालत और जड़ता पर प्रहार किया जाता है। यह किसी वर्ग विशेष के अधिपत्य एवं वर्चस्व को ललकारता है और समानता-स्वतंत्रता की भावनाओं से लैस विश्व बंधुत्व की हिमायत करता है। धार्मिक रूढीयों, जातिपरक चिंतन तथा साम्त्तशाही व्यवस्था की साजिशों में शामिल होकर रचनाकार सामाजिक बराबरी की बात करते हैं। दलित जातीयता और परंपरा बौद्ध को सिरे से नकारते हैं। हिंदी के कई मार्क्सवादी आलोचक दलित साहित्य की आलोचना करने के लिए उन्हीं तर्कों का सहारा लेते हैं जो कलावादियों के हैं। लेकिन कुछ दूसरे वर्णवाद के नाम पर दलित साहित्य का विरोध करते हैं। वर्ण वाद और राष्ट्रवाद को मिलाकर जातीयता की धारणा बनाते हैं और साहित्य को उसी कसौटी पर कसते हैं। ऐसे लोग दलित साहित्य के आंदोलन को हिंदी साहित्य की जातीयता के लिए खतरा मानते हैं। लेकिन उनकी जातीयता के परंपरा बोध में हिंदी क्षेत्र की दलित जातियों पर अनंत अमानुष अत्याचारों की कोई स्मृति नहीं होती और दलितों के संघर्ष की कोई पहचान भी नहीं। ऐसी जातीयता और परंपरा बोध को दलित क्यों स्वीकार करेंगे?

दलित कविता राजनीतिक प्रपंच से दूर रहकर समाज को समानता के नए आयामों की ओर पहुँचाना चाहती है। प्राय हर राजनीतिक दलों ने दलितों की राजनीति की है। उसे प्रलोभन और झूठे आश्वासन दिए गए कि उनके उत्थान के प्रयास जारी है वंचित शोषित के प्रति षड्यंत्र किया गया।दलित रचनाकार समाज का ऐसा कल्पना में देखता है जिसमें पक्षी, नदियों और पवन की भांति इंसान भी समता स्वतंत्रता से मिल पाए, रहा पाए। समता विश्व बंधुत्व की नई भोर में भेदभाव रहित नवनिर्माण की प्रतिबद्धता कवियों में दिखाई देती है। रचनाकारों का ध्येय अपनी संस्कृति धरोहर जिसमें ऊँच-नीच की दीवारें ना हो की प्रस्तावना करना है। अपनी जमीन जंगल पूर्वजों की विरासत और अपनी सर्वांग विश्व-दृष्टि को बचाने और समृद्ध करने के लिए चलाए जाने वाले छोटेछोटे आंदोलन के प्रेरक दौरे भी इन्हीं लोगों की प्रतिबद्धता के परिणाम होते हैं। आपसी विश्वास उम्मीद और भाईचारे को संजोने के संकीर्णता की तमाम खाइयाँ पार्टी जा सकती है। सामंजस्य बनाने से अनसुलझे विवाद भी सरलता से सुलझ जाते हैं डॉक्टर धर्मवीर के अनुसार "आवश्यकता मात्र इतनी है कि दलित वर्ग हिंदू समाज से सामंजस्य रखें। बड़ी आवश्यकता यह है कि दलित वर्ग पूरे भारतीय समाज से सामंजस्य रखें। पूरे भारतीय समाज में बहुत कुछ आ जाता है इसमें हिंदू, मुसलमान, सिख, इसाई, जैन, पारसी, बौद्ध और यहूदी भी है। वंचित दलित और संपन्न के बीच कड़वाहट का स्रोत जाति व्यवस्था की संकीर्णता रही है। जो भी वर्ग अथवा वर्ण सत्ता शासन में रहा उसने कभी भारतीय समाज के ढांचे को बदलने की कोशिश नहीं की। मानवीय चेतना से लैस दलित वर्ग के अंदर स्वाभिमान का भाव उदित हुआ कि वह भी मनुष्य है और उसे भी सिर उठाकर जीने का हक है। दलित में समानता और मानवता के मंच पर खड़ा होने का साहस, जिजीविषा जागी है। अपना अस्तित्व कायम किया है।

ग्लोबल विलेज या विश्वग्राम की संकल्पना में वर्ण और जातीयता की संकीर्णता प्रच्छन्न रूप में तो कम दिखाई पड़ी है परंतु परोक्ष में यह अधिक कट्टर तथा आक्रामक बनकर उभरी है। वैश्विक और राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर रंगभेद, नस्लभेद या वर्ण भेद के रूप में इसकी व्याप्ति बनी है। इस संकीर्णता के पीछे स्थित राजनीति और वोट बैंक का लालच रहा है। जाति और वर्ण के नाम पर राजनीति करने वालों ने अपनी और अपने जैसे कुछ लोगों की राजशाही के लिए निरीह जनता को मोहरा तो बनाया ही, उन्हें आपस में लड़ा कर एक दूसरे की आँख की किरकिरी भी बना दिया है।

राजनेता दलितों को आपस में लड़ा कर अपना तवा तप्त करते हैं। दलित राजनीति रहनुमा पद पाकर अपने ही भाइयों को इकारत और अंत्यज की निगाह से देखते हैं। तमाम दलित राजनेता मंत्री बनकर या कुर्सी पाकर उच्च वर्ग के जुमले पड़ने लगते हैं। स्वयं ब्राह्मणवादी बनकर झोपड़ी और बाड़े को भूल जाते हैं। राजनेता किसी भी तरह अपनी कुर्सी बचाए रखना चाहता है। दलित में दलितों में आपसी संभव भाईचारे की भावना को भावना को उन्होंने कभी नहीं प्रोत्साहित किया इसके अलावा इनकी भावनाओं को भड़का कर अपनी वोट बैंक जरूर पुख्ता किया। महापुरुषों, दलितों कै

आदर्श अंबेडकर, ज्योतिबा फुले तथा शाहू जी महाराज आदि के नाम पर मत को बहुमत में बदलने के लिए मंचों से इनके गुणगान किए गए, मालाएँ अर्पित की गई परंतु मंच से उतरते ही अपने ही भाइयों को रास्ता खाली करने को कहा गया ताकि उनकी शाही सवारी में दूषण न लगे। जरूरत है ऐसी लीजलीजि वैचारिकता का प्रतिकार करने की ताकि समानता स्वतंत्रता की बातें सार्थक की जा सके।

शहरी स्तर पर सवर्ण वर्ग स्वार्थ वश या शिक्षा के संस्कारी दबाव के चलते नियम कानूनों के भय से दलित के प्रति थोड़ा सहिष्णुता, मिलनसार और लोकतांत्रिक हुआ है परंतु ग्रामीण परिवेश में कटुता, हिकारत का भाव जाना शेष है। शोषण और अवमाननाएँ जीवंत बनी है। अरुणाचल प्रदेश के पूर्व राज्यपाल माताप्रसाद दलितों की वर्तमान दशा पर लिखते हैं- "ग्रामीण क्षेत्रों में दलितों की स्थिति अच्छी नहीं है। इनमें अब भी शिक्षा का अभाव है। इन्हें मजदूरी कम दी जाती है। इनके साथ छुआछूत और उत्पीड़न अब भी होता है।" विजय बहादुर सिंह संवैधानिक प्रावधानों के तहत दलितों की दशा को सुधरता देखते हैं। उनका मानना है कि- "दलित चेतना को एक नया बल मिला है, दलितों के आत्मसम्मान की भावना जागी है और उसका आत्मविश्वास बढ़ गया है। दलितों की एकजुट होकर कुछ कर सकने की क्षमता बढ़ गई है।"

गुरु गोविंद सिंह ने कहा था 'मानस की जात सबे एको पहचान व तथा इंसान को सिर्फ इंसान और इंसान के रूप में देखने का पाठ पढ़ाया था। दलित साहित्य का यही यक्ष प्रश्न है कि क्या कभी ऐसा समाज निर्मित हो सकेगा जब आदमी और आदमी के बीच जाति का विभाजन नहीं होगा। ग्लोबलाइजेशन के वर्तमान युग में बाजार का बढ़ता वर्चस्व हमें नव साम्राज्यवाद की ओर ले जा रहा है। कई दलित विचारक बाजारवाद को दलितों के हित में भी देखते हैं तो अनेक प्रबुद्ध लोग इसका प्रतिकार करते हैं। कोई भी व्यक्ति परिश्रम, साहस और दृढ़ निश्चय के बल पर पूँजीवादी व्यवस्था के निरंतर समृद्ध की सीढ़ियाँ चढ़ता जाए। वह अपने और अपने परिवार के लिए धन, सम्मान और बेहतर जीवन प्राप्त कर पाएगा। दलित वंचित तथा वर्ग ही जीवन की तमाम तस्वीरें दिखाते हुए कई रचनाकार एक बुरा दस्तावेज समाज के सामने रखते हैं। बहिष्कृत बस्तियों, स्लम एरिया और दक्खिन टोला में 'भारत उदय' और 'इंडिया शाइनिंग' की सच्ची रिपोर्टिंग की गई है। अभाव, दरिद्रता, अंधश्रद्धा और व्यक्तिगत स्वार्थों को गाढ़ा रंग देकर दलित जीवन का चित्र उकेरा गया है। बीसवीं सदी की दलित कविता ने एक्कीसवीं सदी में और अधिक परिपक्वता अर्जित की है। फासीवादी ताकतों के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिरोध कविताओं ने दर्ज किया है। मात्र वेदना, अपमान, अन्याय और आक्रोश को रेखांकित करके समता, स्वतंत्रता, स्वह-अस्तिव तथा संबंध्दता का उजियारा लाने को प्रतिबद्ध है।